गंध मधुरा

शीतला सहाय श्रीवास्तव

प्रगति प्रकाशन, दिल्ली।

प्रकाशक
प्रोग्रेसिव पब्लिशर्स,
१४ डी, फ़ीरोज़शाह रोड,
नयी दिल्ली।

प्रथमावृत्ति ११००

मुद्रक
काशीप्रसाद भार्गव,
सुलेमानी प्रेस, मच्छोदरी पार्क,
बनारस।

कवि की ओर से

आत्म-प्रशस्ति न मुझसे लिखते बन पड़ी और न मैं लिख सकता था। 'गंध मधुरा' अगर आपको रुची तो मैं अपनी प्रशस्ति मानूँगा। इसके गीत चाँदनी की किरणों से सिंचे हुये हैं और साथ ही आतप की दोपहरी में झुलसे हुये हैं। कहीं मिठास कहीं कड़वाहट, कहीं हास कहीं रुदन, वैसा ही है इन गीतों में जैसा मेरी ज़िंदगी में। संभवतः आपकी भी ज़िंदगी वैसी ही है इसलिये आपके हाथों ये रचनायें सौंपने का मुझे साहस हो रहा है।

श्री अज्ञेय, श्री भगवतीचरण वर्मा और श्री प्रभाकरजी माचवे ने मुझे संग्रह निकालने को प्रेरित किया है उनका मैं आभारी हूँ। उनके अमूल्य सुझावों से मैं लाभान्वित हुआ हूँ।

डुण्डरा, फ़तेहपुर
२३ मई, ५२

शीतला सहाय श्रीवास्तव

मैंने जिसके सुखों को छीना
और
जिसने मेरे दुःखों को अगोरा
ऐसी माया प्रधान को
'गंध मधुरा' समर्पित !

बादल बन छाया

ले लो मेरे नयनों का जल अंचल में
मै आज तुम्हारे घर बादल बन छाया।

सुन लो मेरे जीवन की करुण व्यथायें,
इसलिये रचे ये गीत रात-दिन जगकर,
पढ़ लो यौवन की घाव भरी गाथायें,
इसलिये पृष्ठ सा खोल रहा अंतरतर।
मेरी आहों की छाँह रात सी लम्बी,
प्राणों में मन्थर तिमिर-ज्वार लहराया।

मेरे स्वर सुन आकाश पिघल उठता है
तुम भी पिघलो पूजन-प्रतिमा पाषाणी!
मेरी सिहरन पर पवन मचल उठता है
तुम भी विचलित हो अचल स्नेह के दानी।
प्यासी हैं युग-युग से ये साधें मेरी,
इसलिये अश्रु में तुमको भरने आया।

मेरे सावन में इन्द्रधनुष सा रच दो
बिखरे हलके सपनों का मीठा सरगम,
साँसों में अपना प्यार प्रवाहित कर दो
जीवन-शापों का दोष तनिक तो हो कम,
किरणों से कंचन द्वार खोल दो अपना,
मैं पन्थी हूँ श्लथ-पथ भटका भरमाया।

●

साँस मिल गयी

गीत-गीत में, शब्द-शब्द में छाया मधुमय प्यार
जब तुम आये पहली बार ।

कण-कण पर बिछ गयी तुम्हारी रूप-माधुरी,
स्वर-स्वर में गा उठी तुम्हारी कंठ-बाँसुरी,
किरणों के अवगुण्ठन में हँस उठी पाँखुरी,
मेरे पग पा गये तुम्हारी गति का पन्थ-प्रसार ।
जब तुम आये पहिली बार ।

बादल पर ये इन्द्रधनुष के चित्र खिल गये,
सावन को हँसती बिजली के स्वप्न मिल गये
जिस दिन से तुम रमे असीम अभाव किल गये,
फूल-फूल पर उमड़ उठा शत-शत रंगों का ज्वार ।
जब तुम आये पहिली बार ।

साँस मिल गयी युग-युग के इस विकल मरण को,

पंथ मिल गया भूले-भटके थके चरण को,
दीप मिल गया अंधकार के महावरण को,
विधवा सी सूनी रजनी को मिला नखत-सिंगार।
जब तुम आये पहिली बार।

●

मैं न भूलूँगा

मुझको तुम्हारे प्यार के संगीत ने—
स्वर दे दिये, मैं आज तक हूँ गा रहा।
तुमने मुझे अपनी झलक दी रूप की—
मैं चाँदनी बन हर दिशा में छा रहा।
मैं न भूलूँगा कभी
स्वर का अमिट अभ्यास
छवि का स्वप्नधारी वेष।

सुधियाँ तुम्हारी छाँह बनकर बिछ गई
मैं पन्थ पर अविराम चलता ही गया।
निधियाँ तुम्हारी दृष्टि की बरसीं कि मैं
धुप-दीप सा दिन-रात जलता ही गया।
मैं न भूलूँगा कभी
गति का अजित विश्वास
साँसों का मुखर संदेश।

तुमने मुझे अपनी डगर की धूल दी
मैं फूल में शृङ्गार बनकर बस गया।
मेरी सुरभि आकाश-धरती में बिछी
कोई तुम्हारा स्वप्न आकर हँस गया।
मैं न भूलूँगा कभी
उस एक क्षण का हास
युग-युग के तिमिर का शेष।

●

मैं प्रभात की ज्योति

मैं प्रभात की ज्योति,
कि जिसकी किरण-किरण वरदान।

मैं विकास का फूल,
कि जिसकी पंखुड़ियों का प्यार,
सुरभि बन उड़ा गगन के द्वार,
सजा वन-देवी का शृङ्गार,
अमर कर एक-एक मुसकान।
किरण-किरण वरदान।

मैं सावन का मेघ,
कि जिसकी छाँहे सघन सुनील
भर रहीं सागर-सरिता-झील,
निखिल कूलों के बन्धन ढील,
गा रहा विश्व तृप्ति के गान।
किरण-किरण वरदान।

मैं लहरी का गीत,
कि जिसकी साँसों में स्वर-ताल,
गूँजते नूपुर हुये निहाल,
चरण में गति दी मैंने ढाल,
कि जिसकी पन्थ-पन्थ पहिचान।
किरण-किरण वरदान।

मैं निशीथ का स्वप्न,
कि जिसकी मीठी क्वाँरी साध,
जागरण को लेती है बाँध,
पलक जंज़ीरों में निर्बाध,
नींद में खिला किये अरमान।
किरण-किरण वरदान।

●

मैंने सुधियों की समाधि पर

मैंने सुधियों की समाधि पर इन गीतों के दीप सजाये।

साँझ हुई, पर नक्षत्रों के—
फूलों से आकाश भर गया
मेरी तिमिरजयी दीवाली—
का कण-कण में हास भर गया।
इन लघु आँसू की ध्वनियों से
सहम उठा सूनेपन का उर—
मैंने गूँगी सुधि-वीणा पर इन प्राणों के तार बजाये।
मैंने सुधियों की समाधि पर इन गीतों के दीप सजाये।

यहाँ बहुत आशाओं के शव
सोये अपनी आँखें मूँदे।
उनको मैंने इस जीवन में
अर्पित की संजीवन-बूँदें।
मैं विश्वासों पर जीता हूँ

मिटा कि जो विश्वास खो चुका—
मेरे इन तम भरे लोचनों में मिलनों के स्वप्न लजाये।
मैंने सुधियों की समाधि पर इन गीतों के दीप सजाये।

मेरे घावों का मरहम है
बीते दिन की याद किसी की।
और कल्पना के अधरों पर
हलकी सी मुसकान किसी की।
मेरे इस एकाकी जीवन—
में प्रिय है सपनों का आना
विस्मृतियों के अंध-नीड़ में गान-विहग ये कब मुरझाये।
मैंने सुधियों की समाधि पर इन गीतों के दीप सजाये।

●

खिली ज्योत्स्ना

खिली ज्योत्स्ना मंद हासिनी ।

धरती के चरणों पर बिछकर
नृत्यरता मग्ना सुषमाधर
बिखर गयीं लो धीरे-धीरे
रूपमयी किरणें विलासिनी ।
खिली ज्योत्स्ना मंद हासिनी ।

भरे हर्ष से नभ के लोचन
छलके पड़ते बरबस जलकण
पोंछ रही काजल आँखों का
शशि-दर्पण में श्याम-यामिनी ।
खिली ज्योत्स्ना मंद हासिनी ।

सहम उठे नक्षत्र-विहंगम,
पंख झलमला रहे मनोरम,

गन्धमधुरा

सपनों की दूधी सरिता में
नहा रही है नींद-कामिनी।
खिली ज्योत्स्ना मंद हासिनी।

●

जुन्हाई खिली

पूनम-विपंची में चाँदी के स्वर भर
गाता है निर्झर अकेला विहाग
नभ की अटारी से चंदन लुटाकर
धोता है राकेश सब दिन के दाग।
सरसिज की पाँखों में दूधी किरण को
रजनी की शीतल पहुनाई मिली।
जुन्हाई खिली।

झुरमुट की छाया में सारस की जोड़ी
सोई है दुबकी सी चोंचें मिला,
बगुलों की पाँतें पोखर के तट से
उड़ती हैं धुले-धुले डैने हिला,
उजली लहर पर फिसलती लतायें
पेड़ों की चुप परछाई हिली।
जुन्हाई खिली।

केंचुल से पथ पर सूने पहर में
खरहा सहम कर भरता छलांग,
हँफती हुई ये नौ नीलगायें
ज्वारों के खेतों से आई हैं भाग,
ठंडी बयारों से सिहरी हुई सी,
डोली है भीगी मकाई-तिली।
जुन्हाई खिली।

प्यार तुमने कर लिया

प्यार तुमने कर लिया यह खिल उठा जीवन,
खिल उठा यौवन प्रणयमय खिल उठे तन-मन।

चाँदनी का हास बिखरा हँस उठी धरती,
निर्झरी नभ से किरण की आ रही झरती,
फूल हरसिंगार के सुख-स्वप्न से सींचे,
बिछ गये हैं साँस साधे वृन्त के नीचे।
स्वप्न तुमने दे दिया मुसका उठे लोचन।
खिल उठा जीवन।

कौन था जब पास में बस अश्रु मेरे थे,
दो क्षणों की जिंदगी को नाश घेरे थे,
तुम न होते आज तो फिर क्या सहारा था,
टूटता सा जब गगन से हाय तारा था।
ज्योति तुमने दी हृदय का भर उठा आँगन।
खिल उठा जीवन।

रात भर मैंने विरह की बाँसुरी फूँकी,
साथ स्वर के ही बहाई धार आँसू की,
खो दिया अस्तित्व मैंने प्राप्ति-आशा में,
जल गई उर आरती दर्शन-पिपासा में।
दे दिया संकेत यह लहरा उठा मधुबन।
खिल उठा जीवन।

●

स्नान-चित्र

झर्‌र झर झर—
गिर रहा प्रकाश का पानी
किरणों की फुहारें रे छा रहीं !
धरती—जो युवती—खड़ी हुई नंगी—
हँस-हँस नहा रही
भीग रहे लम्बे सुनहले दिशाओं के केश
कड़े-कड़े पर्वत-उरोज चुप धुल रहे
बर्फ़ के साबुन का फेन लगा कानों में।
उधर खड़ा अम्बर के कोने में सूरज
(ढीठ बहुत, नहीं शरमा रहा)
युवती के साँवले से मुख पर
उलीच रहा पानी
और हँसे जा रहा।

●

नयी किरण

ओ रूप-ज्योति की नयी किरण!
ओ चपल चरण!!

तुम लाल हुई जाती अपने
पग के रक्ताक्त महावर सी
तुम सिमटी जाती अपने में
रंगिनि! निशि के इंदीवर सी,
तिर्यक चितवन में इन्द्रधनुष—
के शत-शत हलके प्यार भरे
तुम मुसकाती मासूम कि जैसे
हरसिंगार के फूल झरे,
मैं चिर अवाक्, चिर मुग्ध तरुण
कैसे बाँधूँ यह चल यौवन!
ओ चपल चरण!

तुम चलीं बज उठे जुम्बिश में

रुनझुन रुनझुन पग के पायल
हो छलक उठा जैसे पनघट पर
तरुणी की कलशी का जल,
तुम रुकीं पसीने की बूँदें
पोंछती माथ से शिथिल-शिथिल
रुक गये पवन की साँसों में
शहनाई-स्वर के साज निखिल,
मैं चिर आतुर, मैं चिर व्याकुल
कैसे रोकूँ यह महातपन !
ओ चपल चरण !!

मेरी पलकों के स्वप्न अखिल
आगमन तुम्हारा देख खिले
बासंती लहरों पर चंदन
के फूल कि जैसे हों फिसले,
ले दीप्त अछूते यौवन में
सासों की पुरनम अँगड़ाई
तुम बड़े भोर आ पड़ीं—
क्षितिज में आभा सी कुछ मुसकाई।
मैं चिर बंदी तम-दुर्निवार
कैसे तोड़ूँ यह अंधभवन !
ओ चपल चरण !!

तुम

तुम युग-युग की पहिचानी सी आई हो !

बासी-बासी फूलों में तुम रूप नया बिखरा रही,
काली-काली दुनिया में चाँदी की नदी बहा रही,
बिखरे हुये सितारों पर सपनों के गीत सजा रही,
मेरी धूमिल पलकों पर बिजली बनकर लहराई हो !
तुम आई हो !

रन्ध्र-रन्ध्र ये मूक बाँसुरी के हौले से बज रहे,
मन्दिर के से दीप प्राण में जगमग-जगमग सज रहे,
रोम-रोम छू साँस तुम्हारी लाज युगों की तज रहे,
तुम आई हो, लहराई हो तुम साँस-साँस में छाई हो !
तुम आई हो !

तुमने आकर मेरे दर्दों को साथी सहला दिया,
मेरी सूनी दिशा-दिशा को प्यार से नहला दिया,

तुमने प्यासी साधों में संतृप्ति- मेघ सा ला दिया,
सब दिन से ज्यादा तुम मेरे इन गीतों को भायी हो !
तुम आई हो !

●

ज्योति के पायल बजे

ज्योति के पायल बजे
जागो प्रभात !

शब्द-पंछी मुक्त हो स्वर-पंख उकसाने लगे,
प्राण में नवचेतना के गान लहराने लगे,
स्वप्न के चिर सत्य की बजने लगीं शहनाइयाँ,
प्यार के विश्वास-पंथी लो निलय आने लगे।
खोलती पाँखें कली सुधि की—
मदिर अभिजात !
ज्योति के पायल बजे
जागो प्रभात !

फूल की मुसकान पर संगीत सा जुटने लगा,
सब कहीं कुम्कुम पवन की साँस पर लुटने लगा,
आ रही है भैरवी की ध्वनि गगन के छोर से,
आज धरती से तिमिर का राज लो उठने लगा।

तुम अभी सोये, उषा आई—
लिये सौगात !
ज्योति के पायल बजे
जागो प्रभात !

ज्वार की फेनिल तरंगों पर जलधि मुसका रहा,
बाँसुरी पर दूर माँझी नवप्रभाती गा रहा,
वह अकेली झील नीली ले रही अँगड़ाइयाँ,
देवदारु प्रमत्त जिसको चूमने सा जा रहा।
लहर पर बिछले कि जिसके—
मसृण चिकने पात !
ज्योति के पायल बजे
जागो प्रभात !

कल्पना-सत्य ओ !

झूलते कंठ में गीत के छंद से—
कामनातीत तुम ! मुक्त निर्बंध से,
इन स्वरों में मलय साँस बन बज उठो—
वंदना-मूर्ति ओ !
कल्पना-सत्य ओ !

बिंदु तुम, भर सके कोष जो सिंधु का,
सिंधु तुम रूप जो है महाबिंदु का,
रूप तुम चित्रमय, रूपमय चित्र भी—
साधना-सौख्य ओ !
कल्पना-सत्य ओ !

प्रात की ओस से तुम सजल, तुम धवल,
साँझ-नक्षत्र ओ ! थरथराते तरल,
तुम कमल-फूल से खिल रहे झील में—
अर्चना-अश्रु ओ !
कल्पना-सत्य ओ !

●

ज्योति-बेला

अभी यह प्रथम किरण का हास,
भर गया जिससे सब आकाश !

पवन के आन्दोलन से जगा
मदिर तन्द्रालस कलि-संसार
कि जिसकी पलकों में निष्णात
सो रहे थे सपने सुकुमार
विहग के रस-निर्झर के गीत
भर गये प्राणों में मधुमास !
अभी यह प्रथम किरण का हास !

हो उठा कितना मोहक पूर्व—
दिशा के अधरों का अनुराग
कि रवि के बढ़े सुकोमल हाथ
प्रतीची की भी भरने माँग
मुग्ध सी हो वकुलों की पाँत

उड़ रही सिमट-सिमट कर पास !
अभी यह प्रथम किरण का हास !

विभा ने डाली हर्ष विभोर
क्षितिज की ग्रीवा में जयमाल
कि जिसकी मुसकानों से हार
गया है मान नियति पति काल
मालि के आँगन में निर्बंध
गूँजता लहरों का उल्लास !
अभी यह प्रथम किरण का हास !

●

प्राण की बाँसुरी

फूँक दो स्वर बजे प्राण की बाँसुरी।

है हृदय का गगन माँगता चाँदनी,
पर बढ़ी आ रही है अमा नाशिनी,
प्यार का चन्द्रमा जब तुम्हारा हँसे,
साँस की रश्मियाँ हों रजत हासिनी।
बह उठे फिर न क्यों स्वप्न की माधुरी!
फूँक दो स्वर बजे प्राण की बाँसुरी।

साध के वृन्त पर कल्पना कोकिला—
बैठकर कूकती स्वर व्यथा के मिला,
खोज हारी तुम्हें प्रीति-मधुमास में
पात में, पुष्प में पंख अपने हिला।
आश की डाल पर फिर गई रे! छुरी।
फूँक दो स्वर बजे प्राण की बाँसुरी।

टिमटिमाता रहा वेदना का दिया,
अश्रु का स्नेह पी जो अभी तक जिया,
घेरती है निराशा-तमिस्त्रा गगन,
प्राण ! अनुराग की अब धरो बातियाँ ।
फिर जले प्रात तक सुधि-शिखा बावरी ।
फूँक दो स्वर बजे प्राण की बाँसुरी ।

●

प्रणय-साधना

पूर्ण हो आज मेरी प्रणय-साधना ।

स्वप्न के नीड़ में मैं कहाँ तक बसूँ
बस तिमिर-जाल में कब तलक छाँह लूँ
बैठकर रश्मियों की रजत-पाँख पर
आज आओ हँसो और मैं भी हँसूँ
उड़ चलें बादलों में लिये कल्पना ।
पूर्ण हो आज मेरी प्रणय-साधना ।

गा उठे रागिनी मत्त हो झूमकर
घुल चले माधुरी अरुणिमा चूमकर
गा उठे प्रीति-उन्माद में रे पिकी
दे लुटा स्वर गगन में मलय घूमकर
विश्व में खिल उठे फिर कलित कामना ।
पूर्ण हो आज मेरी प्रणय-साधना ।

आज सूनी निशा की न साँसें बहें
आज बिछुड़न भरी वे न बातें रहें
आज पलकें मिलन से पुलकमान हों
हर्ष के अश्रु उर की कथा सी कहें
कर रहे हों हृदय-दान की याचना।
पूर्ण हो आज मेरी प्रणय-साधना।

अरुण पंख वाली

अरुण पंख वाली किशोरी किरण तुम
रहो पास में तो मलिन रात क्या है।

तुम्हारी मदिर चितवनों में भरी है
उषा की उमड़ती हुई सी जवानी
तुम्हारे अधर में धरी है सरल सी
कली की प्रथम मुस्कराती कहानी
तुम्हारी हँसी में बने अश्रु मोती
जिन्हे गूँथकर हार पहिना धरा ने—
चरण-चिन्ह अपने बिछा दो डगर पर
कहीं भी चलूँ फिर प्रलय बात क्या है!
अरुण पंख वाली किशोरी किरण तुम
रहो पास में तो मलिन रात क्या है!

स्वरों के सुमन फूटते जब तुम्हारे
स्वयं गूँज उठती प्रणय की प्रभाती

गगन के उनींदे नयन देखते हैं
चकित से, कि कैसे मिली रूप-थाती
दिशा चौंक उठती कि कैसे अँधेरा
हुआ दूर इतने समय का हृदय से
चपल दामिनी सी उठो नाच नभ में
झुके मेघ की अश्रु बरसात क्या है !
अरुण पंख वाली किशोरी किरण ! तुम
रहो पास में तो मलिन रात क्या है !

अचिर स्वप्न थे पर उन्हें मैं सँजोये
रहा घूमता टोह में ही तुम्हारी
न तुम मिल सकीं स्वप्न भी खो गये वे
सिसकती रही आज तक साध सारी
किसी दिन मिलोगी कहीं तुम विजन में
इसी एक विश्वास पर मैं टिका हूँ
मिलेंगे प्रिये ! प्राण से प्राण मेरे
सुरभि श्वास से श्वास फिर गात क्या है !
अरुण पंख वाली किशोरी किरण तुम
रहो पास में तो मलिन रात क्या है !

●

हर साँस अमर हो

हँस देती हो दूर कहीं पर
मुझको यही सहारा कितना !

जब कोकिल सी छिप अमराई
में गा देतीं गीत मलय का,
जाने क्यों धीरे-धीरे बज—
उठता यह मंजीर हृदय का
सौरभ की भीनी ज्वाला में
तापित सा यह मेरा यौवन
कूक तुम्हारी सुनने को बस
दौड़ा-फिरता आकुल वन-वन
दूर कहीं हो पर स्वर भर—
देती हो प्राणों की वंशी में,
शिथिल कुसुम मुसका उठते हैं
मधुमय दान तुम्हारा कितना !
हँस देती हो दूर कहीं पर
मुझको यही सहारा कितना !

किरण तुम्हारी छू सतरंगी
हँस उठती है दीपक-बाती
कन-कन कंचन चूर्ण ज्योति से
अंचल भरे दिशा मुसकाती
स्निग्ध चाँदनी सी बिछ जाती
हो नभ में जब रूप कुमारी
सच कहता हूँ मिट जाती है
शीतलता में ज्वाला सारी
याद तुम्हारी इस अंतर में
जाग रही है तरुणाई सी,
मेरी आँखों में सुषमा का
जलता शीतल तारा कितना !
हँस देती हो दूर कहीं पर
मुझको यही सहारा कितना !

मेरे गीतों की थाती पर
सजनि एक अधिकार तुम्हारा
मेरे प्राणों के स्वर-स्वर में
छलक रहा है प्यार तुम्हारा
तुम न कभी आओ पर मेरी
पूजा का विश्वास अमर हो
मिट जाऊँ मैं, पर तुम पर
मिटने वाली हर साँस अमर हो
मुझको यही बहुत है तुमने
अपनाया यह एक अकिंचन,

नहीं भला अलगाव निभाकर
है अस्तित्व हमारा कितना !
हँस देती हो दूर कहीं पर
मुझको यही सहारा कितना !

●

ओ भग्न चेतन गीत

स्वर-सुरभि की यह महान समाधि
जैसे सो गई हो मृत्यु की भी गूँज
नीले फूल की सी नींद,
(तन्द्रिल नींद)
पाँखों में सुलाकर स्वप्न
जो इतने रहे बेचैन;
कैसी शान्ति !
कैसी शान्ति !!
जिसमें भोर और न साँझ
है उद्दीप्ति और न नाश
जिसमें तृप्ति और न प्यास
फिर भी एक अजब मरोर
जिसका ओर और न छोर
रह रह घुटन के नव द्वन्द्व
उठते, है न जिनका अर्थ;

तू मूक रह
निश्चेष्ट रह
ओ भग्न चेतन-गीत !
यह है सुप्ति का साम्राज्य,
यह है मौन का आदेश !

नींद की रात में

नींद की रात में स्वप्न की चाँदनी

खेलती है हृदय के गगन में खिली
तारिका कामना की जहाँ झिलमिली
पंख को खोलकर कल्पना की किरण
रे ! सजाने सलोना जगत उड़ चली।
हाँ चली है मधुर यामिनी हासिनी।
नींद की रात में स्वप्न की चाँदनी।

दीप भी स्नेह के इस धरा में बले,
हैं कि जिनमें शलभ प्राण के ये जले,
रूप की राशि है झूमती बन शिखा
कालिमा वासना की कि जिसके तले,
है डुलाती जिसे वायु मायाविनी।
नींद की रात में स्वप्न की चाँदनी।

है पलक खोलती आँख-शेफालिका,
धो रही है जिसे अश्रु-नीहारिका,
मन्द मादक सुरा की सुरभि ढरकती
पी जिसे छक रही मन-मधुप-मालिका
गा रही वीण की सी मधुर रागिनी।
नींद की रात में स्वप्न की चाँदनी।

सजल आभास

दे सको दर्शन न तो
केवल अमर विश्वास दे दो।

इस अमावस की निशा में
घिर गया उर में अँधेरा
हो गया ऐसा कि मानों
फिर नहीं होगा सवेरा
मैं जलाता क्षीण सा—
फिर भी प्रणय का दीप अपना;
चाँदनी की छवि न दो
केवल किरण का हास दे दो।
दे सको दर्शन न तो
केवल अमर विश्वास दे दो।

तृप्ति मिल पाई न कोकिल—
को विरह के गीत गाते

क्षण मिले मधुमास के जो
वे शरों से बेध जाते
इन स्वरों की दीर्घ व्यापी
मृदु जलन फूटी गगन में;
दो न छाया मेघ की
केवल सजल आभास दे दो।
दे सको दर्शन न तो
केवल अमर विश्वास दे दो।

देखने हो क्या नहीं वह
बह रही लहरी विकल है
प्रश्न सी आतुर प्रतीक्षामय—
मिला जिसको न हल है
सिंधु के प्रतिबंध देते
हैं तड़पने भी न जी भर;
मुक्ति दो चाहे न, केवल
ज्वार का उल्लास दे दो।
दे सको दर्शन न तो
केवल अमर विश्वास दे दो।

फूँक कर अपनी जवानी

सब दिनों के तुम अपरिचित
आज परिचित हो सकोगे।

प्राण के इन प्रस्तरों पर
चित्र सा कुछ खिंच रहा है
आँसुओं के निर्झरों से
जो निखरकर सिंच रहा है
द्वार कारागार के से
पुतलियाँ ये खोलती हैं
रूप बन्दी कर तुम्हारा
मौन पुलकित डोलती हैं
तुम बहुत धरती-गगन में
हो किये विस्तार तो क्या;
प्राण मेरी साँस में बह
आज सीमित हो सकोगे।

सब दिनों के तुम अपरिचित
आज परिचित हो सकोगे।

आरती की बातियाँ ये
फूँककर अपनी जवानी
कह रहीं हैं भक्ति के
आदर्श की नूतन कहानी
फूल चरणों में चढ़ा क्या
सुख जीवन खो चुका है,
अर्चना-आवेश में लो !
यह शलभ बलि हो चुका है
देवता हो तो हुआ क्या
शिर झुका दोगे इन्हें तुम;
चिर अजेय महान मेरे
अब पराजित हो सकोगे।
सब दिनों के तुम अपरिचित
आज परिचित हो सकोगे।

चाँद स्वर्ग-प्रदीप है जलता
सुधा के कण लुटाता
पर भला पूछो न क्यों
उसको अमर जीवन सुहाता
रात के सूने क्षणों में
रूप धरकर चाँदनी का
चाँद आया लो उतर

गन्धमधुरा

भर अंक काली यामिनी का
कल्पना से तुम न अब
सुकुमार बन उर में बसो प्रिय !
क्योंकि तुम पाषाण ही बन
आज पूजित हो सकोगे।
सब दिनों के तुम अपरिचित
आज परिचित हो सकोगे।

मधु-श्वास

मैं तुम्हें चुप देखता आकाश सा हूँ।

इस निशा में जल रहे हैं स्वप्न के झिलमिल सितारे,
चित्र दीपित हो उठे हैं रूपमय शतशत तुम्हारे,
देखकर मुसकान चितवन की खिला यह प्राण-शतदल,
हो उठा है आँसुओं में मौन उर का गान चंचल,
बज रहा मैं गात कम्पित बाँसुरी के हास सा हूँ।
मैं तुम्हे चुप देखता आकाश सा हूँ।

मैं रहा हूँ दूर तुमसे सत्य है यह सत्य सा ही,
आ गया पर फिर तुम्हारे पास मैं अनजान राही,
दो क्षणों को तुम मुझे प्रिय शान्त अंचल में सुला लो,
नींद की सुख-वल्लरी में मैं न जानूँ तुम झुला लो,
मैं तुम्हारे स्मृति-चरण पर खो गया विश्वास सा हूँ।
मैं तुम्हें चुप देखता आकाश सा हूँ।

मैं कहूँ कैसे कि कैसे दिन दुःखद मैंने बिताये,
है यही संतोष फिर से जल उठे दीपक बुझाये,
मिल गये मंगल-कुसुम तुम खोज में जिसकी फिरा मैं,
देवता तक उठ गया हूँ क्या कहूँ कब-कब गिरा मैं,
नील पाँखों में तुम्हारी बस गया मधु-श्वास सा हूँ।
मैं तुम्हें चुप देखता आकाश सा हूँ।

●

मँझधार में †

मँझधार में भी डूबकर सुधियाँ नहीं भूलीं।

मैं चली थी पार मिलने के लिये ले मृत्तिका-गागर,
गल गई जो हाय ! लहरों बीच ही, मैं बह गई कातर,
आँसुओं का बल नयन में ले तुम्हें केवल पुकारा था,
तुम न बोले किन्तु झाँका बस क्षितिज से एक तारा था,
उन बिजलियों के हास की घड़ियाँ नहीं भूलीं।
मँझधार में भी डूबकर सुधियाँ नहीं भूलीं।

मिट गई मैं प्राण ! अच्छा ही हुआ, मिटना तुम्हें प्रिय है,
एक क्षण की श्वास का विश्वास पर लुटना तुम्हें प्रिय है,
किन्तु कितना शोक ! तुमने फूल का संहार कब देखा,
बुझ गया स्वर-दीप जिसका बीन का वह तार कब देखा,
जल-जल शलभ को दीप की छवियाँ नहीं भूलीं।
मँझधार में भी डूबकर सुधियाँ नहीं भूलीं।

---

† सोनी-महिवाल के प्रणयाख्यान से प्रेरित

दूर तुम हो, दूर इतना हो कि मिलना बस असंभव ही,
जो कली तुम बिन मिटी उसका कि खिलना बस असंभव ही
प्राण ! तुम इन आँसुओं की आज अन्तिम अर्चना लो,
और बस इतना करो, टूटे स्वरों की वंदना लो।
मिट-मिट तुम्हारे प्यार की कड़ियाँ नहीं भूलीं।
मँझधार में भी डूबकर सुधियाँ नहीं भूलीं।

●

जल जायगी यह ज़िंदगी

जल जायगी यह ज़िंदगी,
ढल जायगी यह ज़िंदगी
पर अमर होंगे विरह के गान ये।

यह समय की राख ढक ले चेतना की आग को,
पर न कोई मेट पायेगा अजर अनुराग को,
शूल हों, प्रतिकूल हों पथ में बवण्डर, धूल हो,
पर बढ़ेगा यह पथिक चाहे सरासर भूल हो,
रोक पायेंगे न धुँधले स्वप्न के अवसान ये।

मैं लुटा यदि, तो नहीं संसार को कुछ दोष है,
एक थाती याद की तो है बहुत संतोष है,
कल्पना की छाँह तो है इस विरह की दाह में
और कितना है सहारा मौन सुधि की बाँह में,
दे दिये तुमने तिमिर को तारकों के दान ये।

फूल से मैंने कहा 'पौखें गिरी, क्या शोक है,
बोला 'नहीं, मेरी सुरभि बिखरा रहा हर झोंक है,
मैं मिटा, मुसकान तो मेरी नहीं मिट पायेगी,
धूल में भी मिल जवानी यह नहीं मुरझायगी,
जगमगायेंगे नखत से चरण में बिछ प्राण ये।

एक कम्पन यह लहर सी साँस की लहरा रही,
पर हृदय की बात कुछ भी तो नहीं कह पा रही,
यह प्रणय-आवेग यौवन का अबाधित हो रहा,
आज भी जो तुम बिना शत आँसुओं को ढो रहा,
मौन में पढ़ लो व्यथा के तुम अखिल आह्वान ये।

•

तुम न आया करो

तुम न आया करो
तुम न आया करो
रात में स्वप्न बन-बन न आया करो।

ये कली के न हैं हास मेरे लिये,
कोकिला के न उल्लास मेरे लिये,
बाग़ मेरा हुआ आज वीरान है
अलि ! यहाँ तुम न संगीत गाया करो।
तुम न आया करो।

गीत गाकर किसी भाँति मैं जी रहा,
इस हृदय को स्वरों से विकल सी रहा,
जब कि साथी दुखों के न तुम रह गये
अश्रु बन लोचनों में न छाया करो।
तुम न आया करो।

मैं अकेला पथिक आह भर-भर चला,
प्राण का दीप तूफ़ान में धर चला,
कौन जाने कि कितनी व्यथा की कथा
कह रहा, सुन उसे हँस न जाया करो।
तुम न आया करो।

लो कहीं बज उठी बाँसुरी दूर है,
सुन जिसे विश्व सुख में हुआ चूर है,
पर मुझे क्रूरता से भरा व्यंग यह
प्राण मेरे न तुम यों सताया करो।
तुम न आया करो।

●

ज्वाला दो तो चाँद !

ज्वाला दो तो चाँद ! मुझे दो, दो न रूप की चाँदनी ।

लहरों का कर थाम-थाम कर दौड़ रही मलधार है,
पर सागर के बन्धन में कब मिला तुम्हारा प्यार है,
एक बूँद की लघुता तुम दो जो कि तुम्हें प्रिय ! छू सके,
बादल-रथ पर चढ़कर पहुँचे जहाँ रजत-संसार है ।
मुसकाते हो छिपकर जिसमें अमर रहे वह यामिनी ।
ज्वाला दो तो चाँद ! मुझे दो, दो न रूप की चाँदनी ।

फूलों सा तन सुखा-सुखा कर, गला गला-कर प्राण ये,
करता रहा तुम्हारी पूजा गाकर वन्दन-गान ये,
तुमने मुझको स्वप्न दिये दर्शन के आधी रात में,
पर न कभी आये जीवन में, भरे रहे अरमान ये,
सपनों की बरसात तुम्हारी किरणों में है वन्दिनी ।
ज्वाला दो तो चाँद ! मुझे दो, दो न रूप की चाँदनी ।

हासों में बिखरा देते हो एक नया मधु-मास सा,
फिर भी जाने क्यों रहता हूँ व्याकुल विकल उदास सा,
मैं धरती का एक प्रवासी, तुम हो नभ-वातास के,
तुम अमृत देते हो सबको, मैं तृष्णा का दास सा,
मुझे चाहिये पीड़ा, तुम क्यों देते मादक रागिनी।
ज्वाला दो तो चाँद! मुझे दो, दो न रूप की चाँदनी।

शरमाई कलियों के लोचन खुले किरण-आघात से,
पर तुम क्यों छिप गये मेघ की ओट हाय निष्णात से,
कैसी आँख मिचौनी है यह जिसमें तुम ही जीतते,
बरसा देते हो माया के स्वप्न मदिर अवदात से,
हार दे रहे हो, तो दो, मत दो अब जीत विलासिनी।
ज्वाला दो तो चाँद! मुझे दो, दो न रूप की चाँदनी।

●

संसार सौंपता हार

मैं अपने उर की प्रति, प्रीति के गीत लुटाये बैठा हूँ।

किसको इतनी साध कि मुझको बाँध डोरियों में सुधियों की,
ले क्षण भर आराध बहा एकाध अश्रु-धारा लड़ियों की,
मुझको ऐसी भूल बनी है शूल, फूल बन झूल रहा पर
संसार सौंपता हार निठुर, मैं जीत लुटाये बैठा हूँ।

नील गगन के नयन, चन्द्र-रवि, मगन खुले रहते रातों दिन,
रूप धरा का किरणों से पीते रहते सुख को घड़ियाँ गिन,
यह जग कहता इसको बुरा कि देखूँ चुरा-चुरा कर सुषमा,
पर अपनी मधुर विवशता पर यह रीति उठाये बैठा हूँ।

भौंरो ने अपनी तान, गुनुन गुनगान सुनाये कलियों को,
कलियों ने अपने प्राण मधुर से सौंपे मधुपावलियों को,
पर उनकी इस रँगरेली से क्यों द्वेष कर रहा पवन निठुर,
मैं अपने प्राण जुड़ाने को संगति जुटाये बैठा हूँ।

वह अन्तिम रात

वह मुझको अन्तिम रात नहीं भूलेगी।

जब तुम उदास पतझर के पीले जर्जर स्वर में गाकर
मेरी पीड़ाओं में यौवन के झंझावात उठाकर—
थे चले गये, वह गीतों की सौगात नहीं भूलेगी।
वह मुझको अन्तिम रात नहीं भूलेगी।

पथ का तिमिरांचल चीर थके से विवश-विवश से हारे,
तुम खड़े हो गये पास भरे आँखों में सावन खारे,
जी भर रोये मिल दोनों, वह बरसात नहीं भूलेगी।
वह मुझको अन्तिम रात नहीं भूलेगी।

जो दुर्बल-दुर्बल छाँह धुँये सी हिलती रही तुम्हारी,
हो गई अदृश्य गगन में सुधि की दाह रह गई भारी,
मैं जलूँ सदा, अंगारों की वह पाँत नहीं भूलेगी।
वह मुझको अन्तिम रात नहीं भूलेगी।

●

मैं हँसूँगा

मैं हसूँगा क्योंकि तुम हँसती किरण की नील कणिका सी।

आग मैं लेकर चला था पर स्वयं ही आज हूँ शीतल,
प्राण मैं बनकर चला था, किन्तु शव सा आज हूँ निश्चल,
मैं तुम्हारी ज्योति से भर लूँ हृदय का रिक्त सा अंचल,
मैं जलूँगा क्योंकि तुम जलती शिखा की मौन प्रतिभा सी।
मैं हसूँगा क्योंकि तुम हँसती किरण की नील कणिका सी।

फूल सी इस जिंदगी का सो गया है आज लो स्वर-स्वर,
स्वप्न की छाया तले बस जी रहा हूँ मौत सा बनकर,
अश्रु मुझपर ये नखत, नभ से बहाते रात भर जगकर—
मैं खिलूँगा, क्योंकि तुम खिलती प्रणय की प्रात-कलिका सी।
मैं हँसूँगा क्योंकि तुम हँसती किरण की नील कणिका सी।

मिल गई तुम आग में तो इस हृदय को आज भी चंदन,
तुम नहीं तो मुक्ति की भी कल्पना है साँस का बन्धन,

तुम कहीं संसार में हो इस लिये यह जी रहा है तन,
मैं तिरूँगा, क्योंकि तुम बहतीं शरद की अमृत-सरिता सी।
मै हँसूँगा क्योंकि तुन हँसती किरण की नील कणिका सी।

●

मैं तरी लेकर

मैं तरी लेकर तुम्हारे ही सहारे बह रहा हूँ।

जानता हूँ, आज मेरी शक्ति के प्रतिकूल धारा
क्षिप्रवारि-प्रवाह में फँस मैं नहीं पाता किनारा,
पर तुम्हें ही साथ लेकर वायु-झोंके सह रहा हूँ।
मैं तरी लेकर तुम्हारे ही सहारे बह रहा हूँ।

इस विजन में मूक वन में बस रही बस रात काली,
हँस रही सी मृत्यु पग-पग छा रही नभ में घनाली,
पर तुम्हारी शांति का ही दान पा पथ गह रहा हूँ।
मैं तरी लेकर तुम्हारे ही सहारे बह रहा हूँ।

वीचियों के बीच छप-छप मन्द मेरे डाँड़ चलते,
ज्यों थके पंछी क्षितिज में साँझ होने पर मचलते,
मैं तुम्हारे ही स्वरों में गीत गाथा कह रहा हूँ।
मैं तरी लेकर तुम्हारे ही सहारे बह रहा हूँ।

●

मुझे अश्रु सा

मुझे अश्रु सा चाँदनी ने लुटाया।

सँजोकर मुझे प्यार की वातियों में
गगन-दीपकों के अधर मुस्कराये,
धवल गान फूटे दिशा-बाँसुरी पर,
किरण स्वर बजे, रात ने गुनगुनाये,
क्षितिज-अंचलों ने चपल-कल्पना सा,
मुझे साँस की वल्लरी में झुलाया।
मुझे अश्रु सा चाँदनी ने लुटाया।

चला तृप्ति देने विकल सिंधु को मैं
लहर छू मुझे बन गयी दामिनी सी
तरल बूँद ले बन गया सीप मोती
तृषित सा पुलिन पा गया मधु कनी सी
स्वयं प्यास में मैं रहा किन्तु डूबा,
कहाँ कौन हूँ कुछ समझ में न आया।
मुझे अश्रु सा चाँदनी ने लुटाया।

उड़े स्वप्न पंछी रजत-पंख खोले
नयन-बादलों की करुण छाँह नीचे
मदिर सुधि चटोरे मलय साँस डोली
हृदय ने प्रणय-कोष अपने उलीचे,
किसी ने भुलाया मुझे किन्तु ऐसा—
कि मैं भूलकर भी नहीं भूल पाया।
मुझे अश्रु सा चाँदनी ने लुटाया।

●

सुधियाँ बोलीं

मेरे मन की सभी उदासी
सिमट-सिमट कर हुई इकट्ठा,
इस कोने से उस कोने से
पूरब से पश्चिम से जैसे
बादल की हों मौन टुकड़ियाँ
घिरी घटा बन
घुड़ुम-घुड़ुम करने को आतुर
व्याकुल अश्रु बहा देने को,
हुड़का यह मन
जैसे कूँये के जल भीतर
डूब रहा हो गुड़ुम-गुड़ुम घट
सुधियाँ बोलीं—
चाँद ! कहाँ तुम छिपे जा रहे
चावल सी किरणें छिटका कर
हमको चावल नहीं चाहिये
भूख-प्यास सब चाँद तुम्हीं हो ।

●

मेरा सायंकाल

मेरा सायंकाल तुम्हारे दीप्त गगन में छा जाता तो !

मेरी थकी हुई ये आहें ले लेतीं चुपचाप बसेरा,
आहे फिर कितना ही बढ़ता पलकों में घनघोर अँधेरा,
मंजिल के प्यासे पंथी को मिलती शीतल छाँह तुम्हारी
हारे जीवन को मिल जाती सच ! करुणा की बाँह तुम्हारी
मेरी नीरव गीत-बाँसुरी का स्वर-स्वर मुखरित हो उठता
आज तुम्हारी बाँहों में यदि जी भरकर मैं गा पाता तो।

स्नेह भरी शीतल किरणों से भर लेता मैं अपना अंचल,
जिसमें जलते नक्षत्रों को हाय बटोरा मैंने जल-जल
तुमको छूकर मेरी साँसों की आँधी बनकर मलयानिल,
सुरभि लुटा देती रजनी गंधा की मुसकानों में रिलमिल,
प्राणों की हिल्लोलित गति पर रुक जाता भ्रम का आवर्तन,
आज नीलपंखों पर चढ़कर छवि का शशि मुसका जाता तो।

मंदिर एक प्यार का पावन जिसकी हैं अनंत गाथायें,
जलन जिन्हें लिखती है दीपों की बलिकर जग की सीमायें,

मेरी क्या गिनती, मैं तो हूँ सपने सा अधबुझ अंगारा,
बिखर चुकी पंखुरियाँ जिसकी हूँ वह पूजन फूल तुम्हारा,
मेरे सपनों के कंधों पर दौड़ रहा जीवन का शव है,
खिल-खिल उठते अश्रु अगर मैं दान तुम्हारा पा जाता तो।

पति दुकूलों में दुबली सी कभी उषा आई थी गाती,
रेशम का फैला कर अंचल पढ़ी दिशा ने मधुर प्रभाती,
जागे इन्द्र धनुष सतरंगे सौ-सौ रागारुण बादल पर
छेड़ दिया कलियों के यौवन ने संगीत सुरभि के स्वर भर,
पर अब तो न क्षितिज में कुछ भी, मैं हूँ या है तिमिर अकेला
मिट-मिट कर भी मैं अपने वे क्षण बीते लौटा पाता तो।

❀

धरती का प्यार

आरक्त हो उठा गगन यह देख कर—
'धरती कुसुमांगना
लेती अंगड़ाई थी
सरसों' की पीली सी
साड़ी पहिन कर
यौवन के भार से
शिथिल सी उन्मत्त।
साँसों में बहता था
सौरभ का गन्ध-ज्वार
जिसमें उफनता था
मधु मकरंद झाग
पी-पी कर भृंग जिसे
गाते थे प्रेम राग।
कोकिल-स्वर लहरों में
आ गई चेतना

आई उत्तेजना।
वह मृदु कलियों के
लोचन लजीले खोल
ऊपर निहारती थी
कि नभ भी निहार ले
नखतों के नयन खोल
रश्मि की रसरियों से
उतर पड़े चुपचाप,
भर ले मदान्ध सी
लता-मृणाल-बाँहों में
कस ले, जकड़ ले
कि छूट नहीं पायें फिर
ऐसे आलिंगन में बद्ध हों दोनों वे
रात भर न सुधि रहे
सुधि न हो प्रभात की।'

पहिले तो नसों में
आया उफान एक
वासना-विकार का
किन्तु एक क्षण बाद
किरणों से धुल उठा
हृदय आकाश का।
पर अनुशोचन से
घोर परिताप हुआ
उर दहमान हुआ

आँखें जलने लगीं
अग्नि भंडार सी।
बोला वह छोड़कर
जलता सा उच्छ्वास
"प्रिये अयि! वसुन्धरे!
कैसा आयोजन यह
तुमने किया आज!
कैसा यह अभिसार!
क्या यह सत्य प्यार!
नहीं, नहीं सत्य नहीं
स्वप्न क्षण जीवी है
चाहता नहीं हूँ मैं
आज का प्यार प्रिये।"

नभ-अभिप्रेत सुन
धरती के कान खुले
ग्लानिधूम से
सविकार मुख हुआ
फेंके उतार निज
अभिसार आभरण
फूलों के गुच्छ मंजु
केशों के जूट से,
हास हाय खो गया
चपल विलास पूर्ण,
साँसों में भर गई

गन्धमधुर।

कटुता विषाक्त तिक्त।
हुई वैरागिनी प्रपूर्ण दिग्वसना।

हेर कर रूप यह धरती का खल्वाट
हृदय आकाश का
घिर गया मेघों से
करुण विषाद के।
कौंध गई बिजली
अश्रु के प्रपात भी
हाय झरने लगे।
पावस भर घिरे रहे
बादल उदास से।
देखकर यह दशा
धरती सशंकित सी
मूक सी खड़ी रही
उर में दरारें सी
हाय, फटने लगीं
माथे पर सिलवटें
कितनी ही पड़ गईं
सिंधु सा उमड़ पड़ा
उसके युग-नेत्र में।
झिल्ली के करुण से
व्यथित विहाग में
दादुर की प्रार्थना
चातक के राग में

बोली वसुन्धरा
"मेरे अनन्त प्रिय
आज भी विषाद क्यों
क्या न तुम्हें साधना
प्रसन्न यह कर सकी।
अब भी क्या वासना
का मुझमें कुछ लेश है !
मैं तो तुम्हारे ही
एक लघु इंगित पर
भस्म सब कर चुकी
जीवन का आनंद
और हूँ धो चुकी
प्राणों का मैल-विष !
दूर हूँ दुनियाँ से
जिसमें विकार है
चूर चूर हो गया
यौवन का ज्वार है।
अब शेष यह साध
छू लो यदि प्यार से
अंतर के तार तार
बज उठें सस्पन्द।
सार्थक करो प्राण
जीवन की एकता
जिससे चिर संगिनी
मिटे एक रसता।

प्राण ! तुम मौन ही
रहते हो क्यों उदास
खलती है मुझे यह
तुम्हारी गंभीरता
एक-एक अश्रु भी
तुम्हारे इन नयनों से
ढुलकता जो चुपचाप
मेरे इस अंतर को
करता है दग्धमान
आहुति-घृत-विन्दु सा ।"

धरती के शब्द सुन
द्रवित सा हृदय हुआ
क्षुब्ध आकाश का
क्षितिज के एक ओर
धुल गई श्यामता
और साथ-साथ ही
किरणों सतरंगिनी
छिड़ गई गोरे से
बादल कपोलों पर;
अधर मूक खुल उठे
एक मधुर हास से ।
कुछ ही दिनों बाद
धरती के अंग-अंग
मांसल सुपुष्ट से

पहिन हरीतिमा के
नवल-नवल परिधान
एक बार हँस उठे,
और आकाश भी
हँस उठा एक बार
नखतों की पंक्ति-पंक्ति
मुस्कुरा उठी प्रगल्भ
चाँद खिलखिला उठा
बरस पड़ी चाँदनी
और तभी क्षितिज से
उतर आकाश ने
धरती को प्यार से
अंक में समेट लिया ।